पाठ 12 **दिसम्बर 16-22**

बुराई को अच्छाई के द्वारा पराजित करना

सब्त अपराह्न **दिसम्बर 16**

इस सप्ताह के पाठ के लिए पढ़ें: रोमियों 12,13

याद वचन: *"इस संसार के सदृश न बनो; परन्तु तुम्हारे मन के नए हो जाने से तुम्हारा चाल-चलन भी बदलता जाए, जिससे तुम परमेश्वर की भली, और भावती, और सिद्ध इच्छा अनुभव से मालूम करते रहो"* (रोमियों 12: 2)

यद्यपि, पौलुस रोमियों को व्यवस्था की उनकी गलत धारणाओं के लिए भ्रम मुक्त करने की कोशिश कर रहा है, वह सभी मसीहियों को आज्ञाकारिता के उच्च मानदण्ड के लिए बुलाता है। यह आज्ञाकारिता हमारे हृदय और मन में आंतरिक बदलाव से आता है, एक बदलाव जो केवल परमेश्वर की सामर्थ्य से आता है जो उसमें एक समर्पित व्यक्ति पर कार्य करता है।

रोमियों में यह संकेत नहीं है कि यह आज्ञाकारिता स्वत: आती है। अपेक्षाओं के तौर पर मसीही को जानकार होना जरूरी है : उसे उन अपेक्षाओं को मानने की लालसा होनी चाहिए; और अंत में मसीहियों को सामर्थ्य प्राप्त करने की चाह होनी चाहिए जिसके बिना आज्ञापालन असंभव है।

इसका अर्थ यह है कि कर्म मसीही विश्वास के भाग हैं। कर्मों को तुच्छ समझने का पौलुस का कभी तात्पर्य नहीं रहा; अध्याय 13 से 15 में वह उनपर बलपूर्वक जोर देता है। विश्वास के द्वारा धार्मिकता के विषय में उसने जो पूर्व में कहा है यह उसका इन्कार नहीं है। इसके विपरीत विश्वास के द्वारा जीने का जो अर्थ है कर्म उसकी सच्ची अभिव्यक्ति है। कोई तर्क भी कर सकता है कि यीशु के आने के बाद जोड़े गये प्रकाशन के कारण पुराने नियम की अपेक्षा नये नियम की मांग अधिक कठिन हो गई है। नये नियम के विश्वासियों को यीशु मसीह में उचित नैतिक व्यवहार दिया गया है। वह और कोई अन्य आदर्श नहीं दिखाता जिसका हम पीछा करें। "जैसा मसीह का स्वभाव था वैसा ही तुम्हारा भी स्वभाव हो"। मूसा नहीं, दानिएल नहीं, दाऊद नहीं, सुलेमान नहीं, हनोक नहीं, देबोराह नहीं, एलियाह नहीं (फिलि० 2:5) मानदण्ड उसकी अपेक्षा उस स्तर को प्राप्त नहीं कर सकता ।

रविवार **दिसम्बर 17**

आपकी उचित सेवकाई

अध्याय 11 के साथ रोमियों की किताब के सैद्धांतिक भाग का अंत हो जाता है। अध्याय 12 से 16 व्यावहारिक निर्देश और व्यक्तिगत टिप्पणियों को पेश करता है। तथापि, ये सम्मिलित अध्याय अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि ये दिखलाते हैं विश्वास का जीवन कैसे जीना चाहिए।

आरम्भक के लिए विश्वास आज्ञा-पालन का एक विकल्प नहीं है, माना कि विश्वास किसी भी तरह से परमेश्वर के प्रति हमारी आज्ञाकारिता की बाध्यता को समाप्त करता है। नैतिक निर्देश अभी भी कार्य रूप में हैं; वे विश्लेषित किये जाते और इतना तक कि नये नियम में विस्तारित भी किये गए हैं । और कोई संकेत नहीं दिया गया है, यदि इन नैतिक निर्देशों के द्वारा मसीही के लिए उसके जीवन को नियंत्रित करना सरल होता। इसके विपरीत, हमें बताया गया है कि कभी-कभी यह कठिन होता है, चूँकि स्वयं और पाप के साथ युद्ध हमेशा कठिन होता है (1पत० 4:1) मसीही को ईश्वरीय सामर्थ्य की प्रतिज्ञा की गई है और आश्वासन दिया गया है कि जीत संभव है, परन्तु हम अभी भी शत्रु के

संसार में हैं और परीक्षा (छल) के विरुद्ध अनेक युद्धों को लड़ना होगा। सुसंवाद यह है कि यदि हम गिरते हैं, यदि हम ठोकर खाते हैं, हम त्यागे नहीं जाते वरन् हमारे लिए महायाजक है जो हमारे पक्ष में वकालत करता है (इब्रा० 7:25)

पढ़ें रोमियों 12:1, यहाँ दर्शायी गई समानता किस प्रकार प्रकट करती है कि हमें मसीहियों के तौर पर कैसे जीना है? इसके साथ रोमियों 12:2 किस प्रकार सही बैठता है?

रोमियों 12:1 में पौलुस पुराने नियम के बलिदानों को इंगित कर रहा है। जिस प्रकार प्राचीन काल में परमेश्वर को जानवरों की बलि दी जाती थी, इसी रीति से अब मसीहियों को अपने शरीरों की बलि परमेश्वर को देना है - मृत नहीं वरन् जीवते बलिदानों को उसकी सेवकाई के निमित्त समर्पित करना है।

प्राचीन इस्राएल के समय में प्रत्येक भेंट जो चढ़ावे के तौर पर लायी जाती थी, सावधानीपूर्वक परखी जाती थी। यदि जानवर में किसी प्रकार का दोष पाया गया तो यह अस्वीकार किया जाता था, क्योंकि परमेश्वर ने आज्ञा दी थी कि भेंट दोषरहित हो। इसलिए मसीहियों को आदेश दिया गया है अपने शरीरों को "जीवित, और पवित्र, और परमेश्वर को भावता हुआ बलिदान करके चढ़ाओ।" ऐसा करने के लिए बेहतरीन संभावित दशा में उनके सारे सामर्थ को संरक्षित करना अत्यावश्यक है। यद्यपि हममें से कोई भी दोषरहित नहीं हैं, तर्क यह है कि हम जितना कर सकते हैं - निष्कलंक और विश्वस्त जीवन जीने की लालसा करें।

"तुम्हारी बुद्धि के नये हो जाने से तुम्हारा चाल-चलन भी बदलता जाए (रोमियों 12:2), इस प्रकार प्रेरित (मसीही) उत्कर्ष की व्याख्या करता है; क्योंकि वह उन्हें संबोधित करता है जो पहले से ही मसीही हैं। स्थिर खड़े रहना मसीही जीवन का अर्थ नहीं है, परन्तु वह बेहतर से बेहतरीन की ओर आगे बढ़ना है।" - *मार्टिन लूथर, कॉमेंट्री ऑन रोमन्स, पेज 167, 168* । मसीही जीवन में बेहतर से बेहतरीन की ओर बढ़ने का क्या तात्पर्य है?

सोमवार **दिसम्बर 18**

गंभीरता से सोचना

इस त्रिमास हमने परमेश्वर की व्यवस्था की स्थायित्व के विषय खास बातें की है और बार-बार ज़ोर दिया है कि रोमियों की किताब में पौलुस का संवाद वह नहीं है जो यह सिखाता है कि दस आज्ञाएँ खत्म कर दी गई हैं अथवा विश्वास के द्वारा इसकी वैद्धता समाप्त कर दी गई है।

तथापि व्यवस्था की पत्री में गिरफ्त में आना सहज है कि हम इसके पीछे की आत्मा को भूल गये। और वह आत्मा है प्रेम - परमेश्वर के प्रति प्रेम और एक दूसरे के प्रति प्रेम। प्रतिदिन के जीवन में उस प्रेम को प्रकट करते हुए जब कोई प्रेम का दावा कर सकता है, यह एक अलग विषय है।

पढ़ें रोमियों 12:3-21 । दूसरों के लिए हमें कैसे प्रेम को प्रकट करना है?

जैसा कि 1कुरिन्थियों 12 एवं 13 में पौलुस आत्मा के दानों की चर्चा के बाद प्रेम की प्रशंसा करता है। प्रेम (ग्रीक में अगापे ंहंचम) सबसे बेहतरीन प्रेम है। "परमेश्वर प्रेम है" (1यूहन्ना 4:8), इसलिये प्रेम परमेश्वर के चरित्र का वर्णन करता है। प्रेम करना परमेश्वर की तरह दूसरों के साथ करना और उनसे व्यवहार करना, जैसे परमेश्वर उन्हें व्यवहार करता है।

पौलुस यहाँ पर दिखाता है कि प्रेम को व्यावहारिक तौर पर किस प्रकार प्रकट किया जाये। एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत स्पष्ट होता है, और वह है व्यक्तिगत नम्रता : एक

व्यक्ति की इच्छा "उससे बढ़कर कोई भी अपने आपको न समझे (रोमि० 12:3), एक इच्छा "परस्पर आदर करने में एक दूसरे से बढ़ चलो" (रोमि० 12:10), और "अपनी दृष्टि में बुद्धिमान न होने" की इच्छा (रोमि० 12:16)। स्वयं के लिए मसीह के वचन "मेरा जुआ" अपने ऊपर उठा लो; और मुझसे सीखो, क्योंकि मैं नम्र और मन में दीन हूँ" (मत्ती 11:29), इसके आशय को समझें।

मसीहियों को सभों से अधिक नम्र होना चाहिए। आखिरकार, देखें हम कितने निस्सहाय हैं। देखें हम कितने पतित हैं। देखें हम कितने आश्रित हैं, उद्धार के लिए हमारे स्वयं के बाहर धार्मिकता ही नहीं वरन् उस सामर्थ्य में भी जो हममें काम कर रहा है ताकि हमें उस प्रकार बदले जैसा हम स्वयं कभी नहीं बदल सकते। हमें किस चीज के लिए डींग मारना है? हमें किस चीज पर घमंड करना है? हम किसमें और स्वयं के लिए किस विषय पर घमंड करें? बिलकुल कुछ नहीं। इस व्यक्तिगत नम्रता के शुरुआती बिन्दु पर कार्य करते हुए - केवल परमेश्वर के सामने ही नहीं वरन् दूसरों के सामने - हमें जिस प्रकार पौलुस इन पदों में चेतावनी देता है वैसा जीवन जीना है।

पढ़ें रोमियों 12:18 । इस समय इस चेतावनी को आप अपने जीवन में किस बेहतरी से लागू कर रहे हैं? हो सकता है आपको कुछ प्रवृति समायोजनों की जरूरत हो ताकि हम वचन के कहे अनुसार यहाँ कर सकें?

मंगलवार **दिसम्बर 19**

मसीही और राज्य

पढ़ें रोमियों 13:1-7, इस अनुच्छेद से तरीकों के विषय हम कौन से मूल सिद्धांतों को ले सकते हैं जिसमें हम सरकार की नागरिक शक्ति से संबद्ध होते हैं?

पौलुस के शब्दों को जो इतना दिलचस्प बनाता है वह यह कि उसने उस दौरान लिखा जब संसार में मूर्तिपूजक साम्राज्य का शासन था - एक जो आश्चर्यजनक ढंग से क्रूर था, एक जो विशेष रूप से भ्रष्ट था, और एक जो सच्चे परमेश्वर के विषय कुछ नहीं जानता था, कुछ ही वर्षों में, भारी प्रताड़ना उन पर लाने वाला था जो परमेश्वर की उपासना करना चाहते थे। वाकई में, पौलुस को उस शासन के द्वारा मृत्युदण्ड दिया गया। तथापि इन सब के बावजूद पौलुस वकालत कर रहा था कि मसीहियों को वैसी सरकार के अधीन भी अच्छे नागरिक बने रहना है।

जी हाँ, और यह स्वयं सरकार के विचार के कारण है जो संपूर्ण बाइबल में पाया जाता है। सरकार के सिद्धांत, विचार ईश्वर नियुक्त है। मनुष्यों को समुदाय में नियम-कानूनों एवं मानदंडों के साथ रहने की जरूरत है। अराजकता बाइबलीय अवधारणा नहीं है।

जो कहा गया, इसका यह तात्पर्य नहीं कि परमेश्वर शासन के रूपों को अथवा, जिस प्रकार सभी सरकारें चलती हैं, स्वीकृति देता है। इसके विपरीत, किसी को उतनी दूर दृष्टि करने की जरूरत नहीं, न तो इतिहास में या आज के संसार में जो कुछ क्रूर शासन हैं। तथापि, ऐसी परिस्थितियों में था जहाँ तक संभव हो, मसीहियों को देश की व्यवस्थाओं को मानना चाहिए। मसीहियों को सरकार को सच्चा समर्थन देना चाहिए, उस सीमा तक जब तक इसके दावे परमेश्वर के दावों के साथ विरोध न करते हों। एक व्यक्ति को प्रार्थना पूर्वक एवं सतर्कता के साथ विचार करना चाहिए - एवं दूसरों के सलाह के साथ - एक रास्ते पर शुरुआत से पहले जो उसे उन शक्तियों के साथ संघर्ष में डाल देता है। हम भविष्यद्वाणी के द्वारा जानते हैं कि एक दिन परमेश्वर के विश्वस्त अनुयायियों को संसार के नियंत्रण में राजनीतिक शक्तियों के विरुद्ध मुकाबला करना होगा (प्रका० 13)। तब तक, हमें वह सब करना चाहिए जो हम कर सकते हैं, परमेश्वर के

सामने अच्छे नागरिक होने के लिए हम किसी भी देश में क्यों न रहते हो ं।

"हमें मानव शासन को ईश्वरीय नियुक्ति के आदेश के तौर पर पहचानना है, और पवित्र कर्त्तव्य के तौर पर इसे इसके वैध क्षेत्र तक आज्ञा पालन सिखाना है। परन्तु जब इसके दावे परमेश्वर के दावों के साथ संघर्ष करते हैं तो, हमें मनुष्यों की वजाय परमेश्वर की आज्ञा मानना है। समस्त मानव विधान से बढ़कर परमेश्वर के वचन को अहमियत देनी चाहिए....

"हमें अधिकारियों" को चुनौती नहीं देनी है। हमारे शब्द मौखिक या लिखित, सतर्कतापूर्वक विचार किये जाने चाहिए, ऐसा न हो कि हम स्वयं को अधिक बोलने वाले पाये जाएँ जो कानून और व्यवस्था के प्रति विरोधी न प्रकट करे। हमें वैसा कुछ करना या बोलना नहीं है जो अनावश्यक रूप से हमारे रास्ते को बन्द कर दे।" - *एलेन जी० ह्वाईट, द एक्टस् ऑफ अपोसल्स, पेज 69*

बुधवार **दिसम्बर 20**

एक दूसरे से प्रेम रखो

"आपस के प्रेम को छोड़ और किसी बात में किसी के कर्जदार न हो; क्योंकि जो दूसरे से प्रेम रखता है, उसी ने व्यवस्था पूरी की है।" (रोमि० 13:8), इस अवतरण को हमें किस प्रकार समझना है? क्या इसका अर्थ यह कि यदि हम प्रेम करते हैं, तब परमेश्वर की व्यवस्था को मानने की हमें बाध्यता नहीं?

जैसा यीशु ने पहाड़ी उपदेश में किया, पौलुस यहाँ पर व्यवस्था के निर्देशों को विस्तार देता है, दिखाते हुए कि वह सब जो हम करते हैं, उसके पीछे प्रेम उत्प्रेरक शक्ति होनी चाहिए। क्योंकि व्यवस्था परमेश्वर के चरित्र की प्रतिलिपि है, और परमेश्वर प्रेम है अत: प्रेम करने के लिए व्यवस्था को पूरा करना है। तथापि, पौलुस, जैसे कुछ मसीही दावा करते हैं व्यवस्था की यथार्थता से विस्तृत निर्देशों के लिए प्रेम के कुछ अस्पष्ट मानदंड को वैक्लापित नहीं कर रहा। नैतिक व्यवस्था अभी भी बाध्यकारी है, क्योंकि यह पुन: पाप की ओर संकेत करती है - और कौन है जो पाप की वास्तविकता से इन्कार कर रहा है? यद्यपि व्यवस्था निश्चित रूप से केवल प्रेम के संदर्भ में पालन किया जा सकता है। याद करें उनमें से कुछ ने जो मसीह को क्रूस तक लाये तब घर दौड़े और व्यवस्था को माना।

उदाहरण के तौर पर पौलुस ने कौन-सी आज्ञाओं का उल्लेख किया है जो व्यवस्था पालन में प्रेम के सिद्धान्त को स्पष्ट करती है? रोमि० 13:9 ।

मजे की बात यह है कि प्रेम के कारण नये रूप से प्रस्तुत सिद्धान्त नहीं थे । लैव्यव्यवस्था 19:18 को उद्धृत करने के द्वारा, "तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख," पौलुस दिखलाता है कि सिद्धान्त पुराने नियम की पद्धति का अनिवार्य हिस्सा था। पौलुस पुन: अपने सुसमाचार प्रचार के समर्थन के लिए पुराने नियम से अपील करता है।

इस अवतरणों से कुछ तर्क करते हैं कि पौलुस सिखला रहा है कि केवल कुछ ही आज्ञाएँ जो यहाँ वर्णित हैं प्रभाव में है। यदि ऐसा है तो क्या इसका अर्थ यह है कि मसीही अपने माता-पिता का अनादर कर सकते हैं मूर्तिपूजा कर सकते हैं, और यहोवा के सामने दूसरे देवताओं को रख सकते हैं? कदापि नहीं ।

इस संधर्भ पर दृष्टि डालें । पौलुस वर्णन कर रहा है कि हम एक दूसरे से कैसे संबंध रखें। वह व्यक्तिगत रिश्ते की बात कर रहा है, यही है जो वह आज्ञाओं को क्यों विशेषता दे रहा है जो इन रिश्तों को केन्द्रित करता है। उसका तर्क बाकी व्यवस्था को समाप्त करने के तौर पर निश्चित रूप से अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए। (देखें प्रेरित 15:20, 1थिस्लु० 1:9, 1यूहन्ना 5:21), इसके अतिरिक्त, जिस प्रकार नये नियम के

लेखक संकेत करते हैं, कि दूसरों को प्रेम दिखाने के द्वारा हम परमेश्वर को अपना प्रेम दिखाते हैं (मत्ती 25:40; 1यूहन्ना 4:20,21)

परमेश्वर के साथ अपने संबंध के विषय चिंतन करें और यह किस प्रकार दूसरों के साथ आपके संबंध को प्रतिबिंबित करता है। उन संबंधों में प्रेम कितना बड़ा कारक है? जैसा परमेश्वर हमसे प्रेम करता है दूसरों को प्रेम करना आप कैसे सीख सकते हैं? ठीक वैसा करने में आपके आड़े क्या आता है?

बृहस्पतिवार **दिसम्बर 21**

अब हमारा उद्धार निकट है

"समय को पहिचान कर ऐसा ही करो, इसलिए कि अब तुम्हारे लिए नींद से जाग उठने की घड़ी आ पहुँची है; क्योंकि जिस समय हमने विश्वास किया था, उस समय के विचार से अब हमारा उद्धार निकट है" (रोमि० 13:11)

जैसा हमने पूरे त्रिमास विश्लेषण किया है, रोमियों की इस चिट्ठी में पौलुस का बहुत खास ध्यान था, और वह रोम में कलीसिया के लिए स्पष्टीकरण देता था - विशेषकर वहाँ पर यहूदी विश्वासियों के साथ - नई वाचा के संदर्भ में कर्मों और विश्वास की भूमिका में। विषय था उद्धार और एक पापी यहोवा के सामने किस प्रकार पवित्र और धर्मी समझा जा सकता है। उन्हें मदद देने के लिए जिनका संपूर्ण जोर व्यवस्था पर रहा, पौलुस ने व्यवस्था को इसकी उचित भूमिका और संदर्भ में रख दिया। यद्यपि आदर्शत: यहूदीवाद भी पुराने नियम के काल में अनुग्रह का एक धर्म था, विधिवाद खड़ा हुआ और भारी क्षति पहुँचायी। एक कलीसिया के तौर पर हमें कितनी सावधानी बरतने की जरूरत है ताकि हम वही गलती न करें।

पढ़ें रोमियों 13:11-14, पौलुस यहाँ पर किस घटना के विषय बातें कर रहा है और उस घटना के पूर्वानुमान हमें किस प्रकार कार्य करते रहना चाहिए?

कितना, आकर्षक है कि पौलुस यहाँ पर विश्वासियों से बात कर रहा था, उन्हें उठने और इसे एक साथ प्राप्त करने को बताते हुए क्योंकि यीशु वापस आ रहा था। तथ्य यह कि यह लगभग दो हजार वर्ष पूर्व लिखा गया था, इसका कोई मतलब नहीं। हमें हमेशा मसीह के आगमन की नजदीकता के पूर्वानुमान के साथ जीना चाहिए। जितना तक हम सब कोई चिंतित हैं एवं हमारे अनुभव के द्वारा दूसरा आगमन उतना ही निकट है जितनी हमारी स्वयं की मृत्यु की संभावना है। चाहे अगले सप्ताह या 40 वर्षों में हम मृत्यु में आँखें बंद करते हैं - यह हमारे लिए कोई फर्क नहीं लाता। दूसरी बात जो हम जानते हैं वह है यीशु का दूसरा आगमन। मृत्यु के साथ संभवत: हमेशा, बहुत ही पास हम में से, किसी का समय बिलकुल संक्षिप्त है, और हमारा उद्धार जब हमने पहली बार विश्वास किया, उससे बहुत नजदीक है।

दूसरे आगमन के विषय यद्यपि पौलुस रोमियों की किताब में अधिक वर्णन नहीं करता है, थिस्लुनीकियों एवं कुरिन्थियों की पत्रियों में वह इसे विस्तार से चर्चा करता है। आखिरकार यह बाइबल का एक निर्णायक विषय है, खासकर नये नियम में। इसके बिना और आशा जो यह प्रदान करता है, हमारा विश्वास वाकई में अर्थहीन है। आखिरकार "विश्वास के द्वारा धार्मिकता का दूसरे आगमन को लाये बिना क्या अर्थ है जो उस अद्‌भुत विश्वास को फलवंत करे?

यदि आपको पता होता अगले महीने यीशु आने वाला है आप अपने जीवन में क्या बदलाव लाते और क्यों? यदि आप विश्वास करते हैं कि यीशु आने से एक महीना पहले आप को यह बदलाव की जरूरत है, क्यों नहीं उन चीजों को अभी बदलना चाहिए? क्या फर्क है?

अतिरिक्त अध्ययनः "बाइबल में परमेश्वर की इच्छा प्रकट की गई है। परमेश्वर के वचन की सत्यता अति महान की अभिव्यक्तियाँ हैं। वह जो इन सच्चाइयों को अपने जीवन का हिस्सा बनाता है हर मायने में नयी सृष्टि बनता है। उसे नई बौद्धिक शक्तियाँ नहीं दी गई हैं, परन्तु अंधकार जो अज्ञानता और पाप के द्वारा समझ को धुंधला कर दिया है, हटा दिया गया है। शब्द "मैं तुझे नया हृदय दूँगा" का अर्थ है "मैं तुझे नई चेतना दूँगा।" हृदय का एक बदलाव हमेशा मसीही कर्तव्य के दृढ़ विश्वास के द्वारा उपस्थित होता है। वह जो वचनों पर प्रार्थनापूर्ण एवं नजदीकी ध्यान लगाता है स्पष्ट समझ और स्वस्थ न्याय प्राप्त करेगा, माना कि परमेश्वर की ओर वापस होकर उसने बौद्धिकता के उच्च स्तर को प्राप्त कर लिया।" - *एलेन जी० ह्वाईट, माय लाईफ टूडे, पेज 24*

"प्रभु.... जल्द आ रहा है, और हमें तैयार होना चाहिए और उसके प्रकट होने का इन्तजार करना चाहिए। ओह उसे देखना और उद्धार किये हुए के तौर पर स्वागत किया जाना कितना महिमामय होगा। हमने लम्बा इन्तजार किया परन्तु हमारी आशा मंद्धिम नहीं हुई है। यदि हम राज को उसकी सुन्दरता में देख सकें तो हम हमेशा के लिए आशीषित हो जाते। मैं महसूस करती हूँ माना कि मुझे जोर से चिल्लाना चाहिए : 'घर की ओर अवश्य!' हम समय के नजदीक आ रहे हैं जब मसीह सामर्थ्य और बड़ी महिमा के साथ अपने बचाये हुओं को उनके अनंत घर में ले जाने के लिए आयेगा।" - *एलेन जी० ह्वाईट, टेस्टीमोनीज फॉर द चर्च, वाल्यूम 8, पेज 253*

विचार-विमर्श के लिए प्रश्न :

- कक्षा में, बृहस्पतिवार के अध्ययन के अन्त में सवाल पर छानीबीन करें। जवाब क्या थे जिसे लोगों ने दिये और उन्होंने उन्हें किस प्रकार न्यायोचित ठहराया?
- सवाल यह कि हम कैसे भले नागरिक और भले मसीही हो सकते हैं जो कभी-कभी बहुत कठिन होता है। यदि कोई आपसे सलाह मांगने आवे उस विषय में कि उस विश्वास पर स्थिर होने के लिए जो परमेश्वर की इच्छा थी - यहाँ तक कि यह उसे सरकार के साथ विवाद में भी डाल सकता है - आप क्या कहेंगे? आप कौन-सी सलाह देंगे? आपको कौन-से सिद्धांत का अनुसरण करना चाहिए? यह क्यों कुछ है जिसे हमें आगे बढ़ाना चाहिए, के गंभीरता और प्रार्थनापूर्ण विचार के साथ?
- आप क्या सोचते हैं जो कठिनतम है : व्यवस्था की पत्री को कड़े समर्थन के साथ मानना या परमेश्वर से और दूसरों से बिना शर्त प्रेम करना? अथवा क्या आप तर्क कर सकते हैं कि यह प्रश्न एक गलत द्विभाजन को पेश करता है? यदि ऐसा है तो क्यों?
- जैसे कि हम इस त्रिमास के अंत में पहुँचते हैं रोमियों की किताब से आपने क्या सीखा है जो समझने में हमें मदद करता है कि बदलाव क्यों इतना महत्त्वपूर्ण था, कक्षा में चर्चा करें। रोमियों ने हमें क्या विश्वास करता है और इसे क्यों विश्वास करते हैं, के विषय हमें क्या सिखलाया?